277

[2020] 5 एस. सी. आर 277

ए.

एस. कासी

बनाम

पुलिस के निरीक्षक के माध्यम से बताएँ

समैनल्लूर पुलिस स्टेशन मदुरै जिला (2020 की आपराधिक अपील संख्या 452)

बी.

19 जून, 2020

[अशोक भूषण**,** एम**.** आर**.** शाह और वी**.** रामसुब्रमणियन**,** जे**.** जे**.]**

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 -धारा 167 (2)-पुलिस द्वारा निर्धारित अवधि के भीतर आरोप पत्र दायर नहीं किए जाने की स्थिति में जमानत का अधिकार-अपीलार्थी-अभियुक्त को 21.02.2020 u/ss पर गिरफ्तार किया गया था।457, 380, 457(2), 380(2), 411(2) और 414 (2) आई. पी. सी.-73 दिनों से अधिक समय तक न्यायिक हिरासत में रहने और आरोप पत्र दायर न करने के बाद-अपीलार्थी ने डिफ़ॉल्ट रूप से जमानत के लिए आवेदन किया।167(2) क्र. उच्च न्यायालय के समक्ष पी. सी.-उच्च न्यायालय ने 2020 के सुओ मोटो डब्ल्यू. पी. (सी) संख्या 3 में पारित सुप्रीम कोर्ट के दिनांक 23.03.2020 के एक आदेश का उल्लेख करते हुए यह विचार रखा कि सुप्रीम कोर्ट के आदेश ने यू/एस निर्धारित आरोप पत्र जमा करने की अवधि बढ़ा दी है।167(2) क्र. पी. सी.-अपील पर अभिनिर्धारित किया गयाःदिनांक 1 का आदेश वादियों/वकीलों की सुरक्षा के लिए पारित किया गया था, जिनकी याचिकाएं/आवेदन/मुकदमे/अपील/अन्य सभी कार्यवाहियां समय की पाबंदी बन जाएंगी, वे कोविड-19 वायरस के कारण देश के सामने आने वाली चुनौती को ध्यान में रखते हुए ऐसी कार्यवाही दायर करने के लिए शारीरिक रूप से आने में सक्षम नहीं होंगे-जब सर्वोच्च न्यायालय ने याचिकाएं/आवेदन/मुकदमे/अपील/अन्य सभी कार्यवाहियों को दायर करने की सीमा बढ़ाने का आदेश पारित किया, तो आदेश उन लोगों के लाभ के लिए था, जिन्हें उपाय करना पड़ता है, जिनका उपाय समय पर बाधित हो सकता है क्योंकि वे ऐसी कार्यवाही दायर करने के लिए शारीरिक रूप से आने में असमर्थ थे-दिनांक 1 के आदेश का मतलब यह नहीं पढ़ा जा सकता है कि इसका इरादा कभी भी पुलिस द्वारा आरोप पत्र दायर करने की अवधि को बढ़ाने का था जैसा कि धारा 167 (2) के तहत विचार किया गया था। पी. सी.-इसलिए, लॉकडाउन के दौरान भी जांच अधिकारी को मजिस्ट्रेट (प्रभारी) के समक्ष निर्धारित अवधि के भीतर भी आरोप पत्र दाखिल करने/जमा करने से नहीं रोका गया था-इस प्रकार, उच्च न्यायालय ने दिनांक 1 के आदेश में जांच अधिकारी द्वारा आरोप पत्र दाखिल करने पर प्रतिबंध बढ़ाने में त्रुटि की।

सी.

डी.

ई.

एफ.

जी.

एच.

277 ए.

278 सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट [2020] 5 एस. सी. आर.

भारत का संविधान-आपातकाल की घोषणा और अनुच्छेद 21-दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 - धारा. 167 (2)-उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश ने अभिनिर्धारित किया कि भारत सरकार द्वारा घोषित लॉकडाउन आपातकाल की घोषणा के समान है और लगाए गए प्रतिबंधों से अभियुक्त को डिफ़ॉल्ट जमानत देने के लिए प्रार्थना करने का अधिकार नहीं मिलना चाहिए। 167(2) क्र. पी. सी.-आयोजितःसात न्यायाधीश

बी.

के. एस. पुथास्वामी में संविधान पीठ का निर्णय और एक अन्य बनाम.

भारत संघ और अन्य ने माना कि जीवन और व्यक्तिगत स्वतंत्रता मानव अस्तित्व के लिए अपरिहार्य हैं-वे प्राकृतिक कानून के तहत अधिकारों का गठन करते हैं-किसी व्यक्ति के जीवन में मानवीय तत्व पूरी तरह से जीवन की पवित्रता पर आधारित है-तत्काल मामले में, उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश ने यह कहते हुए गलती की कि सरकार द्वारा घोषित लॉकडाउन आपातकाल की घोषणा के समान है और लॉकडाउन के दौरान लगाए गए प्रतिबंधों से आरोपी को डिफ़ॉल्ट जमानत देने के लिए प्रार्थना करने का अधिकार नहीं मिलना चाहिए, भले ही आरोप पत्र निर्धारित समय के भीतर दायर नहीं किया गया हो।167(2) क्र. पी. सी.-उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश के विचार कानून के अनुसार नहीं थे-तदनुसार, एकल न्यायाधीश के फैसले अपास्त करना कर दिया गया।

सी.

डी.

अपील को अनुमति देते हुए, न्यायालय ने

यह अभिनिर्धारित किया कि **-1.** याचिकाओं/आवेदनों/मुकदमों/अपीलों/अन्य सभी कार्यवाहियों को दायर करने की सीमा वकीलों/वादियों को संबंधित न्यायालयों/न्यायाधिकरणों में ऐसी कार्यवाहियों को दायर करने के लिए शारीरिक रूप से आने से रोकने के लिए बढ़ा दी गई थी। यह आदेश उन वादियों/वकीलों की सुरक्षा के लिए पारित किया गया था जिनकी याचिकाएं/आवेदन/मुकदमे/अपील/अन्य सभी कार्यवाहियां समय की पाबंदी बन जाएंगी क्योंकि वे इस तरह की कार्यवाहियां दायर करने के लिए शारीरिक रूप से नहीं आ पाएंगे।यह आदेश वादियों के लाभ के लिए था जिन्हें किसी अधिकार के लिए लागू क़ानून के अनुसार कानूनी उपाय करना पड़ता है।सीमा का कानून उपचार को रोकता है लेकिन अधिकार को नहीं।जब इस न्यायालय ने याचिकाओं/आवेदनों/मुकदमों/अपीलों/अन्य सभी कार्यवाहियों को दायर करने की सीमा बढ़ाने के लिए उपरोक्त आदेश पारित किया**,** तो आदेश उन लोगों के लाभ के लिए था जिन्हें उपाय करना है**,** जिनका उपाय समय पर बाधित हो सकता है क्योंकि वे ऐसी कार्यवाहियों को दायर करने के लिए शारीरिक रूप से आने में असमर्थ थे।दिनांकित **23.03.2020** आदेश का अर्थ यह नहीं पढ़ा जा सकता है कि इसका कभी भी पुलिस द्वारा आरोप पत्र दाखिल करने की अवधि बढ़ाने का इरादा था जैसा कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा **167 (2)** के तहत विचार किया गया है।जाँच अधिकारी आरोप पत्र ए जमा/दाखिल कर सकता था

ई.

एफ.

जी.

एच.

279

एस. कासी बनाम स्टेट टीएचआर। पुलिस निरीक्षक समैनल्लूर पुलिस स्टेशन मदुरै जिला।

(प्रभारी**)** मजिस्ट्रेट के समक्ष।इसलिए**,** लॉकडाउन के दौरान भी और जैसा कि कई मामलों में किया गया है**,** मजिस्ट्रेट **(**प्रभारी**)** के समक्ष आरोप पत्र दायर/प्रस्तुत किया जा सकता था और जांच अधिकारी को मजिस्ट्रेट **(**प्रभारी**)** के समक्ष निर्धारित अवधि के भीतर भी आरोप पत्र दाखिल/जमा करने से नहीं रोका गया था।**[**पैरा **17] [289-**बी**-**एफ**]2.** यदि कठिनाइयों और वर्तमान महामारी के कारण**,** विवादित निर्णय में एकल न्यायाधीश द्वारा की गई व्याख्या को उसके तार्किक अंत तक ले जाया जाता है**,** तो पुलिस **24** घंटे के भीतर मजिस्ट्रेट के न्यायालय के समक्ष एक आरोपी को भी पेश नहीं कर सकती है जैसा कि दंड प्रक्रिया संहिता**,** **1973** की धारा **57** द्वारा विचार किया गया है।जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है**,** धारा **57** के साथ**-**साथ धारा **167** के प्रावधान एक**-**दूसरे के पूरक हैं और वे प्रावधान हैं जो किसी व्यक्ति के व्यक्तिगत स्वतंत्रता के अधिकार को मान्यता देते हैं जैसा कि भारत के संविधान में

निहित है।इस न्यायालय के दिनांक **1** के आदेश का उद्देश्य कभी भी दंड प्रक्रिया संहिता या किसी अन्य क़ानून के किसी भी प्रावधान को कम करना नहीं था जो किसी व्यक्ति की व्यक्तिगत स्वतंत्रता की रक्षा के लिए अधिनियमित किया गया था।**60** दिन/**90** दिन की अवधि के बाद भी आरोप पत्र दायर करने का अभियोजन पक्ष का अधिकार वर्जित नहीं है।अभियोजन पक्ष **60** दिनों/**90** दिनों के बाद बहुत अच्छी तरह से आरोप पत्र दायर कर सकता है**,** लेकिन आरोप पत्र दायर किए बिना वे किसी आरोपी को उस अवधि से आगे हिरासत में नहीं ले सकते हैं जब आरोपी न्यायालय से प्रार्थना करता है कि वह निर्धारित अवधि के भीतर आरोप पत्र दायर न करने के कारण उसे रिहा कर दे।जाँच जारी रखने और आरोप पत्र प्रस्तुत करने का अभियोजन का अधिकार अनुच्छेद **21** के तहत निहित व्यक्ति की स्वतंत्रता के अधिकार के समान नहीं है और धारा **167, Cr.P.C** सहित अन्य कानूनों में परिलक्षित होता है। **[**पैरा **18] [289-**एफ**-**एच**; 290-**ए**-**सी**]**

बी.

सी.

डी.

ई.

एफ.

3. इस प्रकार**,** इस न्यायालय की स्पष्ट राय है कि एकल न्यायाधीश ने विवादित निर्णय में यह अभिनिर्धारित करने में गलती की कि भारत सरकार द्वारा घोषित लॉकडाउन आपातकाल की घोषणा के समान है।एकल न्यायाधीश का यह विचार कि भारत सरकार द्वारा लॉकडाउन की अवधि के दौरान लगाए गए प्रतिबंधों से अभियुक्त को डिफ़ॉल्ट जमानत देने के लिए प्रार्थना करने का अधिकार नहीं मिलना चाहिए**,** भले ही दंड प्रक्रिया संहिता की धारा **167 (2)** के तहत निर्धारित समय के भीतर आरोप पत्र दायर नहीं किया गया हो**,** स्पष्ट रूप से गलत है और कानून के अनुसार नहीं है।**[**पैरा **25] [294-**ई**-**जी**]**

जी.

एच.

ए.

4. इस प्रकार**,** इस न्यायालय का विचार है कि न तो इस न्यायालय के दिनांक **2** के आदेश में यह माना जा सकता है कि उसने **1** की धारा **167 (2)** के तहत निर्धारित समय को ग्रहण किया है और न ही सरकार द्वारा घोषित लॉकडाउन के दौरान लगाए गए प्रतिबंध किसी अभियुक्त के उन अधिकारों पर किसी प्रतिबंध के रूप में काम करेंगे जो निर्धारित समय के

भीतर आरोप पत्र जमा नहीं करने पर डिफ़ॉल्ट जमानत प्राप्त करने के उसके अक्षम्य अधिकार के संबंध में धारा **167 (2)** द्वारा संरक्षित हैं।उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश ने इस न्यायालय के दिनांक **23.03.2020** के आदेश में इस तरह के प्रतिबंध को पढ़ने में गंभीर त्रुटि की।**[**पैरा **26] [295-**जी**-**एच**; 295-**ए**]**

बी.

सी.

K.S.Puttaswamy और एक अन्य बनाम भारत संघ और

अन्य (2017) 10 एस. सी. सी. 1:[2017] 10 एस. सी. आर. 569-अनुसरण किया गया।

उदय मोहनलाल आचार्य बनाम महाराष्ट्र राज्य

(2001) 5 एससीसी 453:[2001] 2 एससीआर 878; राकेश

डी.

कुमार पॉल बनाम असम राज्य **(2017) 15** एससीसी **67:[2017] 8** एस**.** सी**.** आर**. 785;** अचपाल उपनाम रामस्वरूप और एक अन्य बनाम राजस्थान राज्य **(2019) 14** एस**.** सी**.** सी**. 599:[2018] 12** एससीआर **327;** पंजाब राज्य और एक अन्य बनाम देवांस मॉडर्न ब्रुअरीज लिमिटेड और एक अन्य **(2004) 11**

एससीसी **26:[2003] 5** पूरक।एस**.** सी**.** आर**. 930-**पर निर्भर।

ई.

अतिरिक्त जिला मजिस्ट्रेट, जबलपुर बनाम शिवकांत

शुक्ला (1976) 2 एससीसी 521:[1976] पूरक।एससीआर

172; भारत संघ और अन्य बनाम भानुदास कृष्ण

गावडे और अन्य (1977) 1 एस. सी. सी. 834:[1977] 2 एस. सी. आर. 719-संदर्भित।

एफ.

सेट्टू बनाम राज्य (मद्रास उच्च न्यायालय में, 2020 की सं. 5291); मोहम्मद अली बनाम केरल राज्य (केरल उच्च न्यायालय में, 2020 का जमानत आवेदन संख्या 2856); पंकज बनाम राज्य (राजस्थान उच्च न्यायालय में, 2020 की एस. बी. आपराधिक संशोधन याचिका No.355); विवेक शर्मा बनाम उत्तराखंड राज्य (उत्तराखंड उच्च न्यायालय में, 2020 का प्रथम जमानत आवेदन No.511)-संदर्भित।

जी.

एच.

281

एस. कासी बनाम स्टेट टीएचआर। पुलिस निरीक्षक समैनल्लूर पुलिस स्टेशन मदुरै जिला।

ए.

संदर्भित निर्णय

[2001] 2 एससीआर **878**

पर भरोसा किया गया |

पैरा **11**

[2017] 8 एससीआर **785**

पर भरोसा किया गया |

पैरा **12**

[2018] 12 एससीआर **327**

पर भरोसा किया गया |

पैरा **13**

[1976] पूरक।एससीआर **172**

संदर्भित किया गया है

पैरा **19**

बी.

[1977] 2 एससीआर **719**

संदर्भित किया गया है

पैरा **21**

[2017] 10 एससीआर **569**

पीछा किया।

पैरा **24**

[2003] 5 पूरक।एस**.** सी**.** आर**. 930** पैरा **31** पर निर्भर था।

आपराधिक अपील न्यायनिर्णयः2020 की आपराधिक अपील संख्या 452।

सी.

2020 के सी. आर. एल. ओ. पी. (एम. डी.) संख्या 5296 में मदुरै में मद्रास उच्च न्यायालय के न्यायिक निर्णय और आदेश दिनांक 11.05.2020 से

जयंत मुथुराज, ए. ए. जी., सिद्धार्थ लूथरा, वरिष्ठ अधिवक्ता, करुणाकर महालिक, एम. योगेश कन्ना, अधिवक्तागण उपस्थित दलों के लिए।

डी.

न्यायालय का निर्णय इसके द्वारा दिया गया था

अशोक भूषण**,** जे।

1. यह अपील मद्रास उच्च न्यायालय की मदुरै पीठ के 2020 के Crl.OP (M. D.) No.5296 में दिनांकित 11.05.2020 के फैसले पर सवाल उठाते हुए दायर की गई है, जिसके फैसले से अपीलार्थी की जमानत याचिका खारिज कर दी गई है।

ई.

2. इस अपील को जन्म देने वाले संक्षिप्त तथ्य इस प्रकार हैंः-

2.1.अपीलार्थी भारतीय दंड संहिता की धारा 457,380,457 (2), 380 (2), 411 (2) और 414 (2) के तहत 2015 के अपराध में आरोपी है।अपीलार्थी को उपरोक्त मामले में 21.02.2020 पर गिरफ्तार किया गया था और केंद्रीय कारागार, त्रिची में रखा गया था।धारा 439 के तहत अपीलार्थी की जमानत याचिका को निचली विचारण न्यायालय ने 30.04.2020 पर खारिज कर दिया था।73 दिनों से अधिक समय तक न्यायिक हिरासत में रहने के बाद, अपीलार्थी ने मदुरै पीठ में मद्रास उच्च न्यायालय के समक्ष 2020 का एक आवेदन दायर किया जिसमें ऐसे 73 दिनों के पारित होने और आरोप पत्र दाखिल न करने के कारण जमानत देने का अनुरोध किया गया था।उच्च न्यायालय के समक्ष अपीलार्थी की दलीलों में से एक यह थी कि आरोप पत्र दायर नहीं किए जाने के कारण, अपीलार्थी दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167 (2) के तहत डिफ़ॉल्ट रूप से जमानत का हकदार है।

एफ.

जी.

एच.

ए.

2.2.उच्च न्यायालय ने 2020 के सुओ मोटो डब्ल्यू. पी. (सी) संख्या 3 में पारित इस न्यायालय के दिनांक 23.03.2020 के एक आदेश का उल्लेख करते हुए यह विचार व्यक्त किया:- ".....उच्चतम न्यायालय का आदेश अगले आदेश तक सीमा की अवधि निर्धारित करने वाले सभी प्रावधानों को ग्रहण कर लेता है।निस्संदेह, यह दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 17 (2) के तहत निर्धारित समय को ग्रहण करता है।

बी.

2.3 मद्रास उच्च न्यायालय के दिनांक 11.05.2020 के आदेश से व्यथित होकर, यह अपील दायर की गई है।

3. हमने अपीलार्थी की ओर से पेश वरिष्ठ वकील श्री सिद्धार्थ लूथरा और राज्य के अतिरिक्त महाधिवक्ता श्री जयंत मुथुराज को विद्वान है।

सी.

4. अपीलार्थी के विद्वान वरिष्ठ वकील श्री सिद्धार्थ लूथरा का तर्क है कि उच्च न्यायालय ने यह विचार रखने में त्रुटि की है कि इस न्यायालय के दिनांकित आदेश ने धारा 167 (2) के तहत निर्धारित आरोप पत्र जमा करने की अवधि बढ़ा दी है।इस न्यायालय के दिनांक 1 के आदेश को किसी भी तरह से अभियोजन पक्ष के लिए आरोप पत्र जमा करने की अवधि बढ़ाने के रूप में नहीं पढ़ा जा सकता है।उच्च न्यायालय ने गलती से यह विचार रखा था कि इस न्यायालय का आदेश दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167 (2) के तहत निर्धारित समय को ग्रहण करता है।

डी.

ई.

5. विद्वान वरिष्ठ वकील आगे प्रस्तुत करते हैं कि विवादित निर्णय में विद्वान एकल न्यायाधीश ने भी एक अन्य विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा दिए गए पहले के फैसले के विपरीत दृष्टिकोण रखने में गलती की थी

एफ.

सेट्टू बनाम द स्टेट, सी. आर. एल. ओपी. (एम. डी.) 2020 की सं. 5291 जहाँ

मद्रास उच्च न्यायालय के विद्वान एकल न्यायाधीश ने 08.05.2020 पर निर्णय लिया है कि इस न्यायालय के दिनांकित 23.03.2020 के आदेश को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167 (2) के प्रावधानों पर किसी भी तरह से लागू नहीं विद्वान जा सकता है।

जी.

6. राज्य के विद्वान अधिवक्ता विवादित फैसले का समर्थन करते हैं और प्रस्तुत करते हैं कि जांच करने में भारी कठिनाइयों के कारण, वर्तमान मामले में आरोप पत्र दायर नहीं किया जा सका और अपीलार्थी अनिश्चित स्थिति में धारा 167 (2) का लाभ लेने का हकदार नहीं है जो कोविड-19 महामारी के कारण हुई है।

एच.

283

एस. कासी बनाम स्टेट टीएचआर। पुलिस निरीक्षक समैनल्लूर पुलिस स्टेशन मदुरै जिला। [अशोक भूषण, जे।] ए.

ए.

7. हमने पक्षों के विद्वान अधिवक्ता की दलीलों पर विचार किया है और रिकॉर्ड का अध्ययन किया है।

8. इस अपील में जिस एकमात्र मुद्दे पर निर्णय लेने की आवश्यकता है, वह यह है कि क्या अभियोजन पक्ष द्वारा निर्धारित अवधि के भीतर आरोप पत्र प्रस्तुत नहीं करने के कारण अपीलार्थी दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167 (2) के अनुसार जमानत देने का हकदार था। इससे पहले कि हम 2020 के सुओ मोटू डब्ल्यू. पी. (सी) संख्या 3 में पारित इस न्यायालय के दिनांक 23.03.2020 के आदेश पर ध्यान दें, जिसे उच्च न्यायालय द्वारा धारा 167 (2) Cr.P.C के प्रावधानों पर लागू किया गया है, हमें दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167 के अधिनियमन के उद्देश्य और उद्देश्य पर ध्यान देने की आवश्यकता है।

बी.

सी.

9. पूर्ववर्ती संहिता, अर्थात् दंड प्रक्रिया संहिता, 1898 की धारा 167 में किसी अपराध की जांच 24 घंटे के भीतर पूरी नहीं होने की स्थिति में अपनाई जाने वाली प्रक्रिया निर्धारित की गई थी।दंड प्रक्रिया संहिता, 1898 में धारा 167 को अपराध की प्रकृति या सजा की परवाह किए बिना 24 घंटे के भीतर या 15 दिनों के भीतर जांच के समापन पर आधारित किया गया था।
10. भारत के विधि आयोग ने अपनी 41 वीं रिपोर्ट में जांच पूरी करने की समय सीमा को बढ़ाकर 60 दिन करने की सिफारिश की है।नई दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 ने विधि आयोग की सिफारिशों को प्रभावी बना दिया।अधिनियमित धारा 167 में अपराध की प्रकृति या सजा की परवाह किए बिना 60 दिनों की समय सीमा का प्रावधान किया गया है।वर्ष 1978 में धारा 167 में संशोधन किया गया था।धारा 167 (2) जो अभी तक मौजूद वर्तमान मामले के लिए प्रासंगिक है, निम्नलिखित प्रभाव से हैः-

डी.

ई.

“167.(2) जिस मजिस्ट्रेट को इस धारा के तहत एक आरोपी व्यक्ति को भेजा जाता है, वह समय-समय पर, चाहे उसके पास मामले की सुनवाई करने की अधिकारिता हो या न हो, ऐसे मजिस्ट्रेट को पूरी तरह से पंद्रह दिनों से अधिक की अवधि के लिए ऐसी हिरासत में आरोपी को हिरासत में रखने के लिए अधिकृत कर सकता है, और यदि उसे मामले की सुनवाई करने या मुकदमे के लिए इसे करने की कोई अधिकारिता नहीं है, और वह आगे हिरासत को अनावश्यक समझता है, तो वह आरोपी को ऐसी अधिकारिता वाले मजिस्ट्रेट को भेजने का आदेश दे सकता हैःबशर्ते कि -

एफ.

जी.

(क) मजिस्ट्रेट अभियुक्त व्यक्ति को पुलिस की अभिरक्षा के अलावा पंद्रह दिनों की अवधि के बाद हिरासत में रखने के लिए अधिकृत कर सकता है; यदि वह

एच.

इस बात से संतुष्ट कि ऐसा करने के लिए पर्याप्त आधार मौजूद हैं, लेकिन कोई भी मजिस्ट्रेट इस अनुच्छेद के तहत हिरासत में आरोपी व्यक्ति को कुल अवधि से अधिक के लिए हिरासत में रखने को अधिकृत नहीं करेगा -

(i) नब्बे दिन, जहां जांच मौत, आजीवन कारावास या दस साल से कम की अवधि के कारावास से दंडनीय अपराध से संबंधित है;

बी.

((ख) साठ दिन, जहां अन्वेषण किसी अन्य अपराध से संबंधित है, और, यथास्थिति, नब्बे दिन या साठ दिन की उक्त अवधि की समाप्ति पर, अभियुक्त व्यक्ति को जमानत पर रिहा किया जाएगा यदि वह जमानत देने के लिए तैयार है और जमानत देता है, और इस उप-धारा के तहत जमानत पर रिहा किया गया प्रत्येक व्यक्ति उस अध्याय के प्रयोजनों के लिए अध्याय XXXIII के प्रावधानों के तहत इस तरह से रिहा किया गया समझा जाएगा;]

सी.

डी.

(ख) कोई भी मजिस्ट्रेट इस धारा के तहत किसी भी हिरासत में हिरासत को अधिकृत नहीं करेगा जब तक कि आरोपी को उसके सामने पेश नहीं किया जाता है।

(ग) द्वितीय श्रेणी का कोई भी मजिस्ट्रेट, जो उच्च न्यायालय द्वारा इस संबंध में विशेष रूप से सशक्त नहीं है, पुलिस की हिरासत में हिरासत को अधिकृत नहीं करेगा।

ई.

11. उदय मोहनलाल में इस न्यायालय की तीन**-**न्यायाधीशों की पीठ

आचार्य बनाम महाराष्ट्र राज्य, (2001) 5 एस. सी. सी. 453, ने देखा है

धारा 167 Cr.P.C के प्रावधानों को लागू करने का उद्देश्य. दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 57 में पुलिस अधिकारियों पर 24 घंटे से अधिक समय तक गिरफ्तार किए गए व्यक्ति को हिरासत में रखने का प्रतिबंध है।उद्देश्य यह है कि अभियुक्त को 24 घंटे के भीतर बिना किसी देरी के मजिस्ट्रेट के सामने लाया जाना चाहिए, जो प्रावधान वास्तव में संविधान के अनुच्छेद 22 (2) के तहत दिए गए संवैधानिक जनादेश के अनुरूप है।धारा 167 का प्रावधान धारा 57 का पूरक है।धारा 167 के तहत किसी व्यक्ति को हिरासत में रखने की शक्ति दी गई है, जबकि पुलिस जांच जारी रखती है।इसलिए, धारा 167 एक ऐसा प्रावधान है जो मजिस्ट्रेट को अधिकतम अवधि निर्धारित करते हुए अभियुक्त को हिरासत में रखने की अनुमति देता है।उदय मोहनलाल आचार्य (सुप्रा) में, इस न्यायालय ने धारा 167 पर विचार करते हुए निम्नलिखित निर्धारित कियाः-

एफ.

जी.

“..... धारा **167** का यह प्रावधान वास्तव में धारा **57** का पूरक है**,** इस सिद्धांत के अनुरूप कि अभियुक्त ए

एच.

285

एस. कासी बनाम स्टेट टीएचआर। पुलिस निरीक्षक समैनल्लूर पुलिस स्टेशन मदुरै जिला। [अशोक भूषण, जे।]
ए.

यह माँग करने का अधिकार है कि न्याय में देरी न हो।अभियुक्त को मजिस्ट्रेट के समक्ष पेश करने की आवश्यकता का उद्देश्य मजिस्ट्रेट को यह देखने में सक्षम बनाना है कि रिमांड आवश्यक है और अभियुक्त को एक अभ्यावेदन देने में भी सक्षम बनाना है जो वह करना चाहे।धारा 167 के तहत किसी व्यक्ति को हिरासत में रखने की शक्ति दी गई है, जबकि पुलिस जाँच जारी रखती है और मजिस्ट्रेट द्वारा जाँच शुरू करने से पहले।इसलिए, धारा 167 वह प्रावधान है जो मजिस्ट्रेट को किसी आरोपी को हिरासत में रखने की अनुमति देता है और अधिकतम अवधि निर्धारित करता है जिसके लिए इस तरह के निरोध का आदेश दिया जा सकता है।अधिकतम अवधि परंतुक करने के बाद, जैसा कि ऊपर कहा गया है, धारा 167 की उप-धारा (2) के परंतुक में

इसके बाद क्या परिणाम होंगे, इसका संकेत दिया गया है।परंतुक स्पष्ट और स्पष्ट है और यह परंतुक करता है कि अभियुक्त को जमानत पर रिहा किया जाएगा यदि वह जमानत देने के लिए तैयार है और उसे प्रस्तुत करता है जिसे न्यायिक घोषणा द्वारा "बाध्यकारी जमानत" कहा गया है और ऐसी जमानत को अध्याय 33 के तहत जमानत माना जाएगा।धारा 167 के तहत प्रदान की गई निरोध की अधिकतम अवधि समाप्त होने के बाद जमानत पर रिहा होने के आरोपी के अधिकार से केवल तभी इनकार किया जा सकता है जब कोई आरोपी जमानत नहीं देता है, जैसा कि उक्त धारा के स्पष्टीकरण I से स्पष्ट है।धारा 167 की उप-धारा (2) का परंतुक जांच को अनिश्चित काल तक बढ़ाने और इस तरह एक नागरिक की स्वतंत्रता को प्रभावित करने की शरारत को दूर करने के लिए एक लाभकारी परंतुक है।

बी.

सी.

डी.

ई.

12. एक बार फिर, राकेश कुमार पॉल मामले में इस न्यायालय की तीन-न्यायाधीशों की पीठ द्वारा धारा 167 पर बहुत विस्तृत विचार किया गया है।

एफ.

बनाम असम राज्य, (2017) 15 एससीसी 67।उपरोक्त में यह न्यायालय

मामले में धारा 167 के प्रावधान के विधायी इतिहास का पता लगाया गया है।उपरोक्त मामले में इस न्यायालय ने इस बात पर जोर दिया कि धारा 167 पर बहस को जांच के त्वरित निष्कर्ष के दृष्टिकोण से और व्यक्तिगत स्वतंत्रता के दृष्टिकोण से भी देखा जाना चाहिए।इस न्यायालय ने यह भी माना कि डिफ़ॉल्ट जमानत का अधिकार अक्षम्य अधिकार है जिसे अभियोजन पक्ष द्वारा निराश होने की अनुमति नहीं दी जा सकती है।पैराग्राफ 37,38 और 39 में निम्नलिखित उल्लेख किया गया हैः-

जी.

“37. इस न्यायालय को भारत संघ बनाम निराला यादव, (2014) 9 एस. सी. सी. 457 में इस विषय पर पूरे मामले के कानून की समीक्षा करने का अवसर मिला था।उस निर्णय में उदय मोहनलाल आचार्य बनाम महाराष्ट्र राज्य, (2001) 5 एस. सी. सी. का संदर्भ दिया गया था।

एच.

453 और उस निर्णय में निष्कर्ष पर पहुंचे।हम निष्कर्ष (3) से संबंधित हैं जो इस प्रकार हैः“13.(3) 90 दिनों या 60 दिनों की उक्त अवधि की समाप्ति पर, जैसा भी मामला हो, अभियुक्त के पक्ष में एक अक्षम्य अधिकार प्राप्त होता है कि वह निर्धारित अवधि के भीतर जाँच पूरी करने में जाँच एजेंसी द्वारा चूक के कारण जमानत पर रिहा किया जाए और अभियुक्त जमानत पर रिहा होने का हकदार है, यदि वह मजिस्ट्रेट के निर्देश के अनुसार जमानत देने के लिए तैयार है और प्रस्तुत करता है।”

बी.

38. इस न्यायालय ने संजय दत्त, (1994) 5 एस. सी. सी. 410 में दिए गए निर्णय पर भी विचार किया और कहा कि संविधान पीठ द्वारा निर्धारित सिद्धांत इस आशय का है कि यदि आरोप पत्र दायर नहीं किया गया है और "डिफ़ॉल्ट जमानत" का अधिकार असहनीयता की स्थिति में पहुंच गया है, तो इसे किसी भी बहाने से अभियोजन पक्ष द्वारा निराश नहीं किया जा सकता है।अभियुक्त यह कहते हुए एक आवेदन दायर करके अपनी स्वतंत्रता का लाभ उठा सकता है कि आरोप पत्र या चालान दाखिल करने की वैधानिक अवधि समाप्त हो गई है और वह अभी तक दायर नहीं की गई है और इसलिए उसके पक्ष में अक्षम्य अधिकार अर्जित हो गया है और आगे अभियुक्त जमानत बांड प्रस्तुत करने के लिए तैयार है।39. इस न्यायालय ने यह भी नोट किया कि अभियोजन पक्ष द्वारा अक्षम्य अधिकार को विफल करने की संभावना के अलावा, ऐसे अवसर भी आते हैं जब न्यायालय भी अक्षम्य अधिकार को विफल कर देती है।मोहम्मद को संदर्भ दिया गया था।इकबाल मदार शेख बनाम महाराष्ट्र राज्य, (1996) 1 एस. सी. सी. 722 जिसमें यह कहा गया था कि कुछ अदालतें "डिफ़ॉल्ट जमानत" के लिए आवेदन को कुछ दिनों के लिए लंबित रखती हैं ताकि इस बीच एक आरोप पत्र प्रस्तुत किया जा सके।यद्यपि अभियोजन पक्ष के साथ-साथ कुछ न्यायालयों दोनों की ओर से इस तरह की प्रथा को बहुत दृढ़ता से और जोरदार रूप से हतोत्साहित किया जाना चाहिए, हम दोहराते हैं कि आरोप पत्र या चालान दाखिल करने की वैधानिक अवधि समाप्त होने और न्यायालय में आरोप पत्र या चालान जमा करने के दौरान "डिफ़ॉल्ट जमानत" के लिए अभियुक्त के अक्षम्य अधिकार को विफल करने के लिए किसी भी छल का सहारा नहीं लिया जाना चाहिए।”

सी.

डी.

ई.

एफ.

जी.

13. धारा 167 Cr.P.C पर इस न्यायालय का एक और निर्णय।

गौर किया गया, अर्थात, अचपाल उपनाम रामस्वरूप और एक अन्य बनाम राजस्थान राज्य, (2019) 14 एस. सी. सी. 599।पहले कई का उल्लेख करने के बाद

एच.

उदय ए में इस न्यायालय के निर्णय सहित इस न्यायालय के निर्णय

287

एस. कासी बनाम स्टेट टीएचआर। पुलिस निरीक्षक समैनल्लूर पुलिस स्टेशन मदुरै जिला। [अशोक भूषण, जे।] ए.

मोहनलाल आचार्य (ऊपर) और राकेश कुमार पॉल (ऊपर), यह

न्यायालय ने कहा था कि संहिता के प्रावधान किसी को भी उस अवधि को बढ़ाने का अधिकार नहीं देते हैं जिसके भीतर जांच पूरी की जानी चाहिए।इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि कोई भी न्यायालय प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से ऐसी अवधि नहीं बढ़ा सकता है।पैराग्राफ 20 में इस न्यायालय की टिप्पणियां निम्नलिखित हैंः-

बी.

“20. अब हम सहायक मुद्दे की ओर रुख करते हैं, अर्थात्, क्या उच्च न्यायालय अवधि बढ़ा सकता था।संहिता के प्रावधान किसी को भी उस अवधि को बढ़ाने का अधिकार नहीं देते हैं जिसके भीतर जांच पूरी की जानी चाहिए और न ही यह ऐसी किसी घटना को स्वीकार करता है।आतंकवादी और विघटनकारी गतिविधियाँ (रोकथाम) अधिनियम, 1985 और महाराष्ट्र संगठित अपराध नियंत्रण अधिनियम, 1999 जैसे अधिनियम हैं जो स्पष्ट रूप से अवधि के विस्तार पर विचार करते हैं और उस हद तक उन अधिनियमों ने धारा 167 सहित संहिता के प्रावधानों को संशोधित किया है।न्यायालय को अवधि बढ़ाने का अधिकार देने वाले ऐसे किसी भी समान प्रावधान के अभाव में, कोई भी न्यायालय प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से ऐसी अवधि नहीं बढ़ा सकता था।मामले की किसी भी स्थिति में उच्च न्यायालय ने अपने दिनांक 1 के आदेश में जो कुछ भी दर्ज किया था, वह यह था कि राजपत्रित पुलिस अधिकारी द्वारा दो महीने के भीतर जांच पूरी कर ली जाएगी।आदेश से यह संकेत नहीं मिलता है कि यह उच्च न्यायालय के संज्ञान में लाया गया था कि जांच पूरी करने की अवधि समाप्त हो रही थी।लोक अभियोजक के प्रस्तुत करने की केवल रिकॉर्डिंग को विस्तार देने वाले आदेश के रूप में नहीं लिया जा सकता था।इस प्रकार हम राज्य के विद्वान अधिवक्ता और शिकायतकर्ता द्वारा उस ओर से की गई दलीलों को अस्वीकार करते हैं।”

सी.

डी.

ई.

एफ.

14. जैसा कि ऊपर देखा गया है, दंड प्रक्रिया संहिता की योजना स्पष्ट रूप से दर्शाती है कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167 के प्रावधान किसी व्यक्ति की व्यक्तिगत स्वतंत्रता को उचित सम्मान देते हैं।60 दिनों या 90 दिनों के भीतर आरोप पत्र जमा किए बिना, एक आरोपी को पुलिस द्वारा हिरासत में नहीं लिया जा सकता है।यह प्रावधान व्यक्तिगत स्वतंत्रता को उचित मान्यता देता है।

जी.

15. धारा 167 के उद्देश्य और उद्देश्य को ध्यान में रखने के बाद, अब हम इस न्यायालय के दिनांकित 23.03.2020 के फैसले पर आते हैं, जिस पर विद्वत एकल न्यायाधीश द्वारा यह अभिनिर्धारित करने के लिए भरोसा विद्वान गया है और निर्दिष्ट विद्वान गया है कि धारा 167 (2) में समय अवधि इस न्यायालय के दिनांकित 23.03.2020 के फैसले से ग्रहण हो जाती है।23.03.2020 दिनांकित आदेश पारित किया गया था

एच.

इस न्यायालय द्वारा 2020 के सुओ मोटू डब्ल्यू. पी. (सी) संख्या 3 में।23.03.2020 पर पारित किया गया पूरा आदेश निम्नलिखित प्रभाव से हैः-

“इस न्यायालय ने कोविड-19 वायरस के कारण देश के सामने आई चुनौती से उत्पन्न स्थिति और देश भर के वादियों द्वारा अपनी याचिकाओं/आवेदनों/मुकदमों/अपीलों/अन्य सभी कार्यवाहियों को सीमा के सामान्य कानून या विशेष कानूनों (केंद्र और/या राज्य दोनों) के तहत निर्धारित सीमा की अवधि के भीतर दायर करने में आने वाली कठिनाइयों का स्वतः संज्ञान लिया है।ऐसी कठिनाइयों को दूर करने और यह सुनिश्चित करने के लिए कि वकीलों/वादियों को इस न्यायालय सहित देश भर के संबंधित न्यायालयों/न्यायाधिकरणों में ऐसी कार्यवाही दायर करने के लिए शारीरिक रूप से नहीं आना पड़े, एतद्द्वारा यह आदेश दिया जाता है कि ऐसी सभी कार्यवाहियों में सीमा की अवधि, सामान्य कानून या विशेष कानूनों के तहत निर्धारित सीमा के बावजूद, चाहे वह क्षम्य हो या नहीं, 15 मार्च 2020 से इस न्यायालय द्वारा वर्तमान कार्यवाहियों में पारित किए जाने वाले अगले आदेश तक बढ़ा दी जाएगी।

बी.

सी.

डी.

हम भारत के संविधान के अनुच्छेद 141 सहपठित अनुच्छेद 142 के तहत इस शक्ति का प्रयोग कर रहे हैं और घोषणा करते हैं कि यह आदेश सभी न्यायालयों/न्यायाधिकरणों और प्राधिकरणों पर अनुच्छेद 141 के अर्थ के भीतर एक बाध्यकारी आदेश है।

ई.

इस आदेश को सभी उच्च न्यायालयों के ध्यान में लाया जा सकता है ताकि उनके संबंधित अधिकार क्षेत्र के भीतर सभी अधीनस्थ न्यायालयों/न्यायाधिकरणों को सूचित किया जा सके।

एफ.

उच्च न्यायालयों के सभी पंजीयकों को नोटिस जारी करें, जो चार सप्ताह में वापस किया जा सकता है।"

16. याचिकाओं/आवेदनों/मुकदमों/अपीलों/अन्य सभी कार्यवाहियों को दायर करने के लिए डब्ल्यू. ई. एफ. 15.03.2020 की सीमा की अवधि बढ़ाने के लिए उपरोक्त आदेश पारित करने का कारण आदेश में ही इंगित किया गया है।आदेश पारित करने के लिए दो कारण, जो इस न्यायालय के दिनांक 23.03.2020 के आदेश से समझने योग्य हैं, वे हैं:-

जी.

i) कोविड-19 वायरस के कारण देश के सामने आने वाली चुनौती और इसके परिणामस्वरूप देश भर में वादियों के सामने आने वाली कठिनाइयों से उत्पन्न स्थिति।

एच.

अपनी याचिकाएं/आवेदन/मुकदमे/ए दायर करने में देश

ए.

की अवधि के भीतर अपील/अन्य सभी कार्यवाही

निर्धारित सीमा।

(ii) ऐसी कठिनाइयों को दूर करना और यह सुनिश्चित करना कि वकील/वकील

वादियों को इस न्यायालय सहित देश भर के संबंधित न्यायालयों/न्यायाधिकरणों में ऐसी कार्यवाही दायर करने के लिए शारीरिक रूप से आने की आवश्यकता नहीं है।

बी.

17. याचिकाओं/आवेदनों/मुकदमों/अपीलों/अन्य सभी कार्यवाहियों को दायर करने की सीमा वकीलों/वादियों को संबंधित न्यायालयों/न्यायाधिकरणों में ऐसी कार्यवाहियों को दायर करने के लिए शारीरिक रूप से आने से रोकने के लिए बढ़ा दी गई थी।यह आदेश उन वादियों/वकीलों की सुरक्षा के लिए पारित किया गया था जिनकी याचिकाएं/आवेदन/मुकदमे/अपील/अन्य सभी कार्यवाहियां समय की पाबंदी बन जाएंगी क्योंकि वे इस तरह की कार्यवाहियां दायर करने के लिए शारीरिक रूप से नहीं आ पाएंगे।यह आदेश वादियों के लाभ के लिए था जिन्हें किसी अधिकार के लिए लागू क़ानून के अनुसार कानूनी उपाय करना पड़ता है।सीमा का कानून उपचार को रोकता है लेकिन अधिकार को नहीं।जब इस न्यायालय ने याचिकाओं/आवेदनों/मुकदमों/अपीलों/अन्य सभी कार्यवाहियों को दायर करने की सीमा बढ़ाने के लिए उपरोक्त आदेश पारित किया, तो आदेश उन लोगों के लाभ के लिए था जिन्हें उपाय करना है, जिनका उपाय समय पर बाधित हो सकता है क्योंकि वे ऐसी कार्यवाहियों को दायर करने के लिए शारीरिक रूप से आने में असमर्थ थे।आई. डी. 1 दिनांकित आदेश को इस अर्थ में नहीं पढ़ा जा सकता है कि इसका कभी भी पुलिस द्वारा आरोप पत्र दाखिल करने की अवधि बढ़ाने का इरादा था जैसा कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167 (2) के तहत विचार किया गया है।जाँच अधिकारी (प्रभारी) मजिस्ट्रेट के समक्ष आरोप पत्र प्रस्तुत/दाखिल कर सकता था।इसलिए, लॉकडाउन के दौरान भी और जैसा कि कई मामलों में किया गया है, मजिस्ट्रेट (प्रभारी) के समक्ष आरोप पत्र दायर/प्रस्तुत किया जा सकता था और जांच अधिकारी को मजिस्ट्रेट (प्रभारी) के समक्ष निर्धारित अवधि के भीतर भी आरोप पत्र दाखिल/जमा करने से नहीं रोका गया था।

सी.

डी.

ई.

एफ.

18. यदि कठिनाइयों और वर्तमान महामारी के कारण, विवादित निर्णय में विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा की गई व्याख्या को उसके तार्किक अंत तक ले जाया जाता है, तो पुलिस 24 घंटे के भीतर मजिस्ट्रेट के न्यायालय के समक्ष एक आरोपी को भी पेश नहीं कर सकती है जैसा कि दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 57 द्वारा विचार विद्वान गया है।जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, धारा 57 के प्रावधान के साथ-साथ धारा 167 प्रत्येक अन्य प्रावधानों के पूरक हैं जो भारत के संविधान में निहित व्यक्ति की व्यक्तिगत स्वतंत्रता के अधिकार को मान्यता देते हैं। इस न्यायालय के दिनांक 23.03.2020 के आदेश का उद्देश्य कभी भी दंड प्रक्रिया संहिता या किसी अन्य क़ानून के किसी भी प्रावधान को कम करना नहीं था जिसे सुरक्षा के लिए अधिनियमित किया गया था।

जी.

एच.

व्यक्ति की व्यक्तिगत स्वतंत्रता।60 दिन/90 दिन की अवधि के बाद भी आरोप पत्र दायर करने का अभियोजन पक्ष का अधिकार वर्जित नहीं है।अभियोजन पक्ष 60 दिनों/90 दिनों के बाद बहुत अच्छी तरह से आरोप पत्र दायर कर सकता है, लेकिन आरोप पत्र दायर किए बिना वे किसी आरोपी को उस अवधि से आगे हिरासत में नहीं ले सकते हैं जब आरोपी न्यायालय से प्रार्थना करता है कि वह निर्धारित अवधि के भीतर आरोप पत्र दाखिल न करने के कारण उसे रिहा कर दे।जाँच जारी रखने और आरोप पत्र प्रस्तुत करने का अभियोजन का अधिकार अनुच्छेद 21 के तहत निहित व्यक्ति की स्वतंत्रता के अधिकार के समान नहीं है और धारा 167, Cr.P.C सहित अन्य कानूनों में परिलक्षित होता है। मद्रास उच्च न्यायालय की निम्नलिखित टिप्पणियाँ विवादित निर्णय में स्पष्ट रूप से इस न्यायालय के दिनांकित 23.03.2020 के आदेश के विपरीत हैंः-

बी.

सी.

"……उच्चतम न्यायालय का आदेश अगले आदेश तक सीमा की अवधि निर्धारित करने वाले सभी प्रावधानों को ग्रहण कर लेता है।निस्संदेह, यह दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167 (2) के तहत निर्धारित समय को भी ग्रहण करता है।

19. विवादित फैसले के पैराग्राफ 13 में एकल न्यायाधीश ने यह भी विद्वान है कि सरकार द्वारा घोषित लॉकडाउन आपातकाल की घोषणा के समान है।विद्वान एकल न्यायाधीश ने संविधान के अनुच्छेद 360 के तहत वित्तीय आपातकाल का भी उल्लेख किया है।विद्वान एकल न्यायाधीश ने यह भी देखा कि वर्तमान में हालांकि राज्य विधिवत घोषित आपातकाल से नहीं गुजर रहा है, लेकिन पूरे देश ने मानव जाति के कल्याण के लिए प्रतिबंधों को स्वीकार किया है।आइए हम इस बात की भी जांच करें कि क्या संविधान के अनुच्छेद 352 के तहत आपातकाल की घोषणा की स्थिति में, क्या अनुच्छेद 21 के तहत निहित स्वतंत्रता का अधिकार निलंबित है?

डी.

ई.

20. हम इस न्यायालय के संविधान पीठ के फैसले को याद कर सकते हैं

अतिरिक्त जिला मजिस्ट्रेट, जबलपुर बनाम शिवकांत

एफ.

शुक्ला, (1976) 2 एस. सी. सी. 521, जिसमें अधिकांश न्यायाधीशों (न्यायमूर्ति एच. आर. खन्ना ने असहमति व्यक्त करते हुए) का विचार था कि अनुच्छेद 352 के तहत आपातकाल की घोषणा के बाद, अनुच्छेद 21 के तहत अधिकार को लागू करने के लिए कोई कार्यवाही शुरू नहीं की जा सकती है।न्यायमूर्ति सी. जे. जिनके साथ तीन अन्य माननीय न्यायाधीशों ने पैराग्राफ 136 और पैराग्राफ 137 में सहमति व्यक्त की हैः-

जी.

"136. पहला, हमारे संविधान के अनुच्छेद 359 के खंड (1) के तहत 27 जून, 1975 के राष्ट्रपति के आदेश को देखते हुए किसी भी व्यक्ति को अनुच्छेद 226 के तहत बंदी प्रत्यक्षीकरण के लिए उच्च न्यायालय के समक्ष कोई रिट याचिका दायर करने या अधिनियम के तहत हिरासत में लिए गए व्यक्ति की व्यक्तिगत स्वतंत्रता के किसी भी अधिकार को लागू करने के लिए कोई अन्य रिट या आदेश या निर्देश देने का अधिकार नहीं है।

एच.

291

एस. कासी बनाम स्टेट टीएचआर। पुलिस निरीक्षक समैनल्लूर पुलिस स्टेशन मदुरै जिला। [अशोक भूषण, जे।] ए.

इस आधार पर कि निरोध का आदेश या निरंतर निरोध किसी भी कारण से अधिनियम के तहत या अनुपालन में नहीं है या अवैध या दुर्भावनापूर्ण है।

137. दूसरा, अनुच्छेद 21 राज्य के खिलाफ जीवन और व्यक्तिगत स्वतंत्रता के अधिकारों का एकमात्र भंडार है।बंदी प्रत्यक्षीकरण के रिट का कोई भी दावा अनुच्छेद 21 का प्रवर्तन है और इसलिए, राष्ट्रपति के आदेश द्वारा वर्जित है।"

बी.

21. संघ में इस न्यायालय का एक और तीन न्यायाधीशों का निर्णय

भारत और अन्य बनाम भानुदास कृष्ण गावडे और

अन्य**, (1977) 1** एस**.** सी**.** सी**. 834,** ने इसी दृष्टिकोण का अनुसरण किया

ए. डी. एम., जबलपुर बनाम शिवकांत में इस न्यायालय का बहुमत

सी.

शुक्ला।पैराग्राफ **23** में निम्नलिखित देखा गया थाः**-**

"23.....तदनुसार, यदि कोई व्यक्ति अपनी व्यक्तिगत स्वतंत्रता से वंचित था, न कि भारत रक्षा अधिनियम या उसके तहत बनाए गए किसी नियम या आदेश के तहत, बल्कि उसके

उल्लंघन में, तो संविधान के अनुच्छेद 21 और 22 द्वारा प्रदत्त अपने अधिकारों के प्रवर्तन के लिए किसी भी न्यायालय का रुख करने का उसका अधिकार वर्जित नहीं था।16 नवंबर, 1974 के राष्ट्रपति के आदेश का स्वरूप और प्रभाव कमोबेश ऐसा ही था।हालाँकि, 27,1975 और 8 जनवरी, 1976 के राष्ट्रपति के आदेशों के संबंध में स्थिति काफी अलग है।ये आदेश किसी भी सीमा से सीमित नहीं हैं और उनकी प्रयोज्यता किसी भी पूर्ववर्ती शर्त की पूर्ति पर निर्भर नहीं है।वे संविधान के अनुच्छेद 19,21 और 22 द्वारा प्रदत्त मौलिक अधिकारों के प्रवर्तन पर पूर्ण या पूर्ण प्रतिबंध लगाते हैं, जिसमें व्यक्तिगत स्वतंत्रता के रूप में वर्णित व्यक्ति की स्वतंत्रता के सभी प्रकार या पहलू शामिल हैं।[ए. के. गोपालन बनाम मद्रास राज्य, ए. आई. आर. 1950 एस. सी. 27 देखें। खरक सिंह बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, ए. आई. आर. 1963 एस. सी. 1295 और ए. डी. एम. जबलपुर बनाम शिवकांत शुक्ला (ऊपर)।]इस प्रकार इस बात में कोई संदेह नहीं है कि 27 जून, 1975 और 8 जनवरी, 1976 के राष्ट्रपति के आदेशों ने संविधान के अनुच्छेद 14,19,21 और 22 में निहित अधिकारों को लागू करने के लिए किसी भी न्यायालय का रुख करने के लिए विदेशी सहित किसी भी व्यक्ति को दिए गए अधिकार की प्रवर्तनीयता को बिना शर्त निलंबित कर दिया है।”

डी.

ई.

एफ.

जी.

22. संविधान के अनुच्छेद 359 को 44 वें संवैधानिक संशोधन अधिनियम, 1978 द्वारा संशोधित किया गया था।अनुच्छेद 359 के उप-अनुच्छेद (1) में "अनुच्छेद 20 और 21 को छोड़कर" पद जोड़ा गया है।संशोधन के बाद, अनुच्छेद 359 (1) इस प्रकार हैः-

एच.

“

भाग द्वारा प्रदत्त अधिकारों के प्रवर्तन का निलंबन

III आपात स्थिति के दौरान।359(1).जहां आपातकाल की घोषणा लागू है, राष्ट्रपति आदेश द्वारा घोषणा कर सकता है कि भाग III द्वारा प्रदत्त अधिकारों (अनुच्छेद 20 और 21 को छोड़कर) के प्रवर्तन के लिए किसी भी न्यायालय में जाने का अधिकार जो आदेश में उल्लिखित किया जा सकता है और इस प्रकार उल्लिखित अधिकारों के प्रवर्तन के लिए किसी भी न्यायालय में लंबित सभी कार्यवाही उस अवधि के लिए निलंबित रहेगी जिसके दौरान घोषणा लागू है या ऐसी छोटी अवधि के लिए जो आदेश में निर्दिष्ट की जा सकती है।

बी.

23. अतिरिक्त जिले में इस न्यायालय के फैसले का स्टिंग

सी.

मजिस्ट्रेट, जबलपुर बनाम शिवकांत शुक्ला (ऊपर), और

इस प्रकार, अनुच्छेद 21 के तहत संरक्षित अधिकार के संबंध में उठाए गए प्रतिगामी कदमों को संसद द्वारा उपरोक्त संवैधानिक संशोधन द्वारा तुरंत सुधार दिया गया।न्यायमूर्ति एच. आर. का अल्पमत निर्णय।

अतिरिक्त जिला मजिस्ट्रेट, जबलपुर बनाम में खन्ना

शिवकांत शुक्ल (ऊपर) ने माना है कि राज्य के पास कानून के अधिकारियों के बिना व्यक्ति को उसके जीवन या स्वतंत्रता से वंचित करने की कोई शक्ति नहीं है।पैराग्राफ 525 और 530 में न्यायमूर्ति खन्ना ने कहाः-

डी.

"525.....मेरा मानना है कि अनुच्छेद 21 को जीवन और व्यक्तिगत स्वतंत्रता के अधिकार का एकमात्र भंडार नहीं माना जा सकता है।कानून के शासन द्वारा शासित सभ्य समाजों में जीवन और व्यक्तिगत स्वतंत्रता का अधिकार मनुष्य का सबसे मूल्यवान अधिकार है।कई आधुनिक संविधानों में कुछ मौलिक अधिकार शामिल हैं, जिनमें व्यक्तिगत स्वतंत्रता से संबंधित अधिकार भी शामिल हैं।ब्लैकस्टोन के अनुसार, अंग्रेजों के पूर्ण अधिकार व्यक्तिगत सुरक्षा, व्यक्तिगत स्वतंत्रता और निजी संपत्ति के अधिकार थे।अमेरिकी स्वतंत्रता की घोषणा (1776) में कहा गया है कि सभी मनुष्यों को समान बनाया गया है, और उनके अपरिहार्य अधिकारों में जीवन, स्वतंत्रता और खुशी की खोज शामिल हैं।

ई.

एफ.

XXXXXXXXXXXXXXX

530. संविधान में अनुच्छेद 21 के अभाव में भी, राज्य को कानून के अधिकार के बिना किसी व्यक्ति को उसके जीवन या स्वतंत्रता से वंचित करने की कोई शक्ति नहीं है।यह कानून के शासन की आवश्यक अभिधारणा और बुनियादी धारणा है न कि सभी सभ्य देशों में पुरुषों की।जीवन और स्वतंत्रता की ऐसी पवित्रता के बिना, एक अराजक समाज और कानूनों द्वारा शासित समाज के बीच अंतर का कोई अर्थ नहीं होगा।द ए.

जी.

एच.

एस. कासी बनाम स्टेट टीएचआर। पुलिस निरीक्षक समैनल्लूर पुलिस स्टेशन मदुरै जिला। [अशोक भूषण, जे।] ए.

यह सिद्धांत कि कानून के अधिकार के बिना किसी को भी उसके जीवन या स्वतंत्रता से वंचित नहीं किया जाएगा, इस विचार में निहित है कि जीवन और स्वतंत्रता अमूल्य संपत्ति है जिसे व्यक्तिगत सनक और सनक का खेल नहीं बनाया जा सकता है और यह कि कोई भी कार्य जो जीवन और स्वतंत्रता के साथ छेड़छाड़ का प्रभाव रखता है, उसे देश के कानूनों से पोषण और मंजूरी मिलनी चाहिए।अनुच्छेद 21 उस सिद्धांत के एक आवश्यक पहलू को शामिल करता है और इसे संविधान के भाग III में गारंटीकृत मौलिक अधिकारों का हिस्सा बनाता है।हालाँकि, उपरोक्त से यह नहीं पता चलता है कि यदि अनुच्छेद 21 का मसौदा तैयार नहीं किया गया होता और इसे भाग III में शामिल नहीं किया गया होता, तो उस स्थिति में राज्य को किसी व्यक्ति को कानून के अधिकार के बिना उसके जीवन या स्वतंत्रता से वंचित करने की अनुमति होती।हमारे समक्ष यह दिखाने के लिए कोई मामला उद्धृत नहीं किया गया है कि संविधान के लागू होने से पहले या कानून के शासन वाले देशों में जहां अनुच्छेद 21 के अनुरूप कोई प्रावधान नहीं है, अदालतों द्वारा कभी भी यह दावा किया गया था कि राज्य किसी व्यक्ति को कानून के अधिकार के बिना उसके जीवन या स्वतंत्रता से वंचित कर सकता है।

बी.

सी.

डी.

24. हम देख सकते हैं कि इस पर संविधान पीठ का निर्णय

ए. डी. एम., जबलपुर बनाम शिवकांत शुक्ला (ऊपर) में न्यायालय,

जिसकी नींव को 44 वें संवैधानिक संशोधन द्वारा खारिज कर दिया गया था, उसे औपचारिक रूप से सात न्यायाधीशों की संविधान पीठ के फैसले K.S.Puttaswamy और अन्य द्वारा रद्द कर दिया गया है।

ई.

बनाम भारत संघ और अन्य**, (2017) 10** एससीसी **1.**डॉ**.**

D.Y.Chandrachud, जे**.** ने अनुच्छेद **136** और **139** में न्यायालय की ओर से बोलते हुए कहाः**-**

“136. ए. डी. एम. जबलपुर में बहुमत वाले सभी चार न्यायाधीशों द्वारा दिए गए निर्णय गंभीर रूप से त्रुटिपूर्ण हैं।जीवन और व्यक्तिगत स्वतंत्रता मानव अस्तित्व के लिए अपरिहार्य हैं।ये

अधिकार, जैसा कि केशवानंद भारती में मान्यता प्राप्त हैं, मौलिक अधिकार हैं।वे प्राकृतिक कानून के तहत अधिकारों का गठन करते हैं।व्यक्ति के जीवन में मानवीय तत्व समग्र रूप से जीवन की पवित्रता पर आधारित है।गरिमा स्वतंत्रता और स्वतंत्रता से जुड़ी हुई है।कोई भी सभ्य राज्य कानून के अधिकार के बिना जीवन और व्यक्तिगत स्वतंत्रता पर अतिक्रमण करने पर विचार नहीं कर सकता है।न तो जीवन और न ही स्वतंत्रता राज्य द्वारा प्रदत्त उपहार हैं और न ही संविधान इन अधिकारों का निर्माण करता है।संविधान के आने से पहले भी जीवन का अधिकार मौजूद रहा है।अधिकार को मान्यता देने में, संविधान करता है

एफ.

जी.

एच.

अधिकार का एकमात्र भंडार नहीं बनना।यह सुझाव देना बेतुका होगा कि अधिकारों के विधेयक के बिना एक लोकतांत्रिक संविधान राज्य द्वारा शासित व्यक्तियों को जीने के अधिकार या अधिकार के प्रवर्तन के साधनों के अस्तित्व के बिना छोड़ देगा।जीवन का अधिकार प्रत्येक व्यक्ति के लिए अविभाज्य होने के कारण, यह संविधान से पहले मौजूद था और संविधान के अनुच्छेद 372 के तहत लागू रहा।न्यायमूर्ति खन्ना का यह कहना स्पष्ट रूप से सही था कि संविधान के तहत जीवन और व्यक्तिगत स्वतंत्रता के अधिकार की मान्यता इसके अलावा उस अधिकार के अस्तित्व को नकारती नहीं है और न ही यह एक भ्रामक धारणा हो सकती है कि संविधान को अपनाने में भारत के लोगों ने मानव व्यक्तित्व के सबसे मूल्यवान पहलू, जीवन, स्वतंत्रता और स्वतंत्रता को उस राज्य को सौंप दिया, जिसकी दया पर ये अधिकार निर्भर करेंगे।इस तरह का निर्माण कानून के शासन की मूल नींव के विपरीत है जो व्यक्ति की स्वतंत्रता से संबंधित होने पर आधुनिक राज्य में निहित शक्तियों पर प्रतिबंध लगाता है।बंदी प्रत्यक्षीकरण पत्र जारी करने की न्यायालय की शक्ति कानून के शासन की एक बहुमूल्य और निर्विवाद विशेषता है।

बी.

सी.

डी.

139. ए. डी. एम. जबलपुर को तदनुसार खारिज किया जाना चाहिए और किया जाना चाहिए। हम ए. डी. एम. जबलपुर के बाद भारत संघ बनाम भानुदास कृष्ण गावडे के फैसले को भी खारिज करते हैं।"

ई.

25. इस प्रकार, हमारी स्पष्ट राय है कि विवादित निर्णय में विद्वान एकल न्यायाधीश ने यह अभिनिर्धारित करने में गलती की कि भारत सरकार द्वारा घोषित लॉकडाउन आपातकाल की घोषणा के समान है।विद्वान एकल न्यायाधीश का यह विचार कि भारत सरकार द्वारा लॉकडाउन की अवधि के दौरान लगाए गए प्रतिबंधों से अभियुक्त को डिफ़ॉल्ट जमानत देने के लिए प्रार्थना करने का अधिकार नहीं मिलना चाहिए, भले ही दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 167 (2) के तहत निर्धारित समय के भीतर आरोप पत्र दायर नहीं विद्वान गया हो, स्पष्ट रूप से गलत है और कानून के अनुसार नहीं है।

एफ.

26. इस प्रकार, हमारा विचार है कि न तो इस न्यायालय द्वारा अपने दिनांक 2 के आदेश में आई. डी. 1 की धारा 167 (2) के तहत निर्धारित समय को ग्रहण किया जा सकता है और न ही सरकार द्वारा घोषित लॉकडाउन के दौरान लगाए गए प्रतिबंध किसी अभियुक्त के उन अधिकारों पर किसी प्रतिबंध के रूप में काम करेंगे जो निर्धारित समय के भीतर आरोप पत्र जमा नहीं करने पर डिफ़ॉल्ट जमानत प्राप्त करने के उसके अक्षम्य अधिकार के संबंध में धारा 167 (2) द्वारा संरक्षित हैं।विद्वान एकल न्यायाधीश ने ए में इस तरह के प्रतिबंध को पढ़ने में गंभीर त्रुटि की

जी.

एच.

295

एस. कासी बनाम स्टेट टीएचआर। पुलिस निरीक्षक समैनल्लूर पुलिस स्टेशन मदुरै जिला। [अशोक भूषण, जे।] ए.

इस न्यायालय का दिनांकित आदेश 23.03.2020।27. एक और कारण है जिसके कारण विद्वान एकल न्यायाधीश के विवादित निर्णय को अपास्त करना जाना चाहिए।मद्रास उच्च न्यायालय के एक विद्वान एकल न्यायाधीश ने 2020 के Crl.OP (एम. डी.) संख्या 5291, सेट्टू बनाम राज्य, में पहले ही 2020 के सुओ मोटो डब्ल्यू. पी. (सी) संख्या 3 में पारित इस न्यायालय के दिनांक 23.03.2020 के फैसले और धारा 167 (2) Cr.P.C पर इसके प्रभाव पर विचार विद्वान था। उपरोक्त जमानत का मामला भी था जिसमें आरोपी आरोप पत्र जमा नहीं करने के कारण डिफ़ॉल्ट जमानत देने की प्रार्थना कर रहा था।अभियोजन पक्ष ने आपत्ति जताई थी और 2020 के सुओ मोटो डब्ल्यू. पी. (सी) नंबर 3 में पारित इस न्यायालय

के दिनांक 1 के आदेश पर भरोसा किया था जिसमें दावा किया गया था कि आरोप पत्र दाखिल करने की अवधि अगले आदेश तक बढ़ा दी गई है।अभियोजन की प्रस्तुति को विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा खारिज कर दिया गया था।विद्वान एकल न्यायाधीश ने पैराग्राफ 14 और 15 में निम्नलिखित टिप्पणियां की थीं:-

बी.

सी.

"14. व्यक्तिगत स्वतंत्रता बहुत मूल्यवान मौलिक अधिकार है।अनुच्छेद 21 में कहा गया है कि कानून द्वारा स्थापित प्रक्रिया के अलावा किसी भी व्यक्ति को उसकी व्यक्तिगत स्वतंत्रता से वंचित नहीं किया जाएगा।जब तक Cr.P.C की धारा 167 (2) की भाषा वैसी ही बनी हुई है, मुझे अनिवार्य रूप से यह मानना होगा कि याची को यहां अनिवार्य जमानत से इनकार करना निश्चित रूप से भारत के संविधान के अनुच्छेद 21 के तहत उसके मौलिक अधिकार का उल्लंघन होगा।माननीय उच्चतम न्यायालय के निर्देश का महान उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि कोई भी वादी अपने मूल्यवान अधिकारों से वंचित न रहे।लेकिन, अगर मैं प्रत्यर्थी पुलिस की याचिका को स्वीकार करता हूं, तो माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्देश, जिसका उद्देश्य अधिकारों को बचाना और संरक्षित करना है, के परिणामस्वरूप अभियुक्त को अर्जित किए गए मूल्यवान अधिकार को छीन लिया जाएगा।

डी.

ई.

एफ.

15. बेशक, मेरे द्वारा बनाए गए निर्माण का कुछ विशेष कानूनों, जैसे कि गैरकानूनी गतिविधि (रोकथाम) अधिनियम, 1967 और एन. डी. पी. एस. अधिनियम, 1985 के तहत कुछ अपराधों के मामले में कोई आवेदन नहीं होगा।उदाहरण के लिए, एन. डी. पी. एस. अधिनियम की धारा 36-ए (4) जांच अधिकारी को कानून में उल्लिखित अवधि को 180 दिनों से बढ़ाकर 1 वर्ष करने के लिए विशेष न्यायालय में आवेदन करने में सक्षम बनाती है यदि जांच पूरी करना संभव नहीं है।इस प्रकार, कुछ कानूनों के तहत, अभियोजन पक्ष को समय बढ़ाने के लिए आवेदन करने का अधिकार है।उन मामलों में, माननीय के निर्देश का लाभ

जी.

एच.

2020 की सुओ मोटू रिट याचिका (सिविल) संख्या 3 में सुप्रीम न्यायालय द्वारा बनाई गई 23.03.2020 लागू होगी।लेकिन, अन्य अपराधों के संबंध में जिनके लिए Cr.P.C की धारा 167 लागू है, उक्त निर्देश का लाभ नहीं उठाया जा सकता है।"

28. उक्त मामले में अभियुक्त की डिफ़ॉल्ट जमानत देने की प्रार्थना की अनुमति दी गई थी। अभियोजन पक्ष का दावा कि इस न्यायालय के दिनांक 23.03.2020 के आदेश द्वारा, धारा 167 Cr.P.C के तहत आरोप पत्र दायर करने की अवधि बढ़ा दी गई है, विशेष रूप से खारिज कर दिया गया था।

बी.

29. मद्रास उच्च न्यायालय के विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा सेट्टू बनाम राज्य (उपरोक्त) मामले में यह विचार व्यक्त विद्वान गया है कि 2020 के सुओ मोटो डब्ल्यू. पी. (सी) संख्या 3 में पारित इस न्यायालय का दिनांकित आदेश धारा 167 (2) Cr.P.C के तहत आरोप पत्र दायर करने की अवधि को नहीं बढ़ाता है।केरल उच्च न्यायालय ने अपने निर्णय दिनांक 20.05.2020 में जमानत आवेदन सं.

सी.

2856 2020-मोहम्मद अली बनाम। केरल राज्य और अन्र.

2020 के सुओ मोटो डब्ल्यू. पी. (सी) नंबर 3 में पारित इस न्यायालय के दिनांक 23.03.2020 के आदेश के आधार पर उठाए गए तर्क को ध्यान में रखते हुए उक्त तर्क को खारिज कर दिया गया और इसके विद्वान एकल न्यायाधीश के फैसले का पालन विद्वान गया।

डी.

मद्रास उच्च न्यायालय ने सेट्टू बनाम राज्य (ऊपर) में।केरल हाई

न्यायालय ने फैसले के पैराग्राफ 13 में कहाः- "13. मैं मद्रास उच्च न्यायालय के विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा 2020 के Crl.O.P. (एम. डी.) No.5291 में और साथ ही उत्तराखंड उच्च न्यायालय के विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा निर्धारित कानून के स्पष्टीकरण से सम्मानपूर्वक सहमत हूं, जब उनके स्वामी ने कहा था कि जांच एजेंसी सुप्रीम कोर्ट द्वारा सुओ मोटो रिट याचिका में जारी निर्देशों से लाभान्वित नहीं हो सकती है।"

ई.

एफ.

30. राजस्थान उच्च न्यायालय को धारा 167 के साथ-साथ 2020 के सुओ मोटो डब्ल्यू. पी. (सी) संख्या 3 में पारित इस न्यायालय के दिनांक 2 के आदेश पर विचार करने का अवसर मिला था और राजस्थान उच्च न्यायालय भी इसी निष्कर्ष पर पहुंचा है कि इस न्यायालय के

दिनांक 2 के आदेश का अधिकार पर कोई परिणाम नहीं है, जो धारा 1 के तहत निर्धारित समय के भीतर आरोप पत्र दाखिल न करने पर अभियुक्त को प्राप्त होता है।

जी.

एस. बी. आपराधिक पुनरीक्षण याचिका संख्या 355 में राजस्थान उच्च न्यायालय

2020 का**-**पंकज बनाम राज्य ने **22.05.2020** पर निर्णय लिया है कि उसने मद्रास उच्च न्यायालय के विद्वान एकल न्यायाधीश के सेट्टू बनाम राज्य **(**ऊपर**)** के फैसले का भी पालन विद्वान है और यह माना है कि आरोपी डिफ़ॉल्ट जमानत देने का हकदार था।उत्तराखंड उच्च न्यायालय ने पहली जमानत याचिका खारिज की

एच.

2020 का आवेदन **No.511-**विवेक शर्मा बनाम स्टेट ऑफ ए

297

एस. कासी बनाम स्टेट टीएचआर। पुलिस निरीक्षक समैनल्लूर पुलिस स्टेशन मदुरै जिला। [अशोक भूषण, जे।] ए.

उत्तराखंड ने अपने दिनांकित 12.05.2020 के फैसले में 2020 के सुओ मोटो डब्ल्यू. पी. (सी) नंबर 3 में पारित इस न्यायालय के दिनांकित 23.03.2020 के फैसले पर विचार करने के बाद यह विचार लिया है कि इस न्यायालय के आदेश में पुलिस जांच शामिल नहीं है।हम मद्रास उच्च न्यायालय के विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा सेट्टू बनाम राज्य (ऊपर) के साथ-साथ केरल उच्च न्यायालय, राजस्थान उच्च न्यायालय और उत्तराखंड उच्च न्यायालय द्वारा ऊपर देखे गए उपरोक्त दृष्टिकोण को स्वीकार करते हैं।

बी.

31. विवादित फैसले में विद्वान एकल न्यायाधीश ने सेट्टू बनाम राज्य (ऊपर) में विद्वान एकल न्यायाधीश के पहले के फैसले के विपरीत दृष्टिकोण अपनाया है।यह अच्छी तरह से तय है कि एक समन्वय पीठ एक विपरीत दृष्टिकोण नहीं ले सकती है और यदि कोई संदेह था, तो एक समन्वय पीठ केवल एक बड़ी पीठ द्वारा विचार के लिए मामले को भेज सकती है।न्यायिक अनुशासन ऐसा आदेश देता है।राज्य में यह न्यायालय

सी.

पंजाब और एक अन्य बनाम देवांस मॉडर्न ब्रुअरीज लिमिटेड और

एक अन्य**, (2004) 11** एस**.** सी**.** सी**. 26,** पैराग्राफ **339** में निम्नलिखित निर्धारित किया गया है**:-**

“339. न्यायिक अनुशासन में यह परिकल्पना की गई है कि एक समन्वय पीठ पूर्ववर्ती समन्वय पीठ के निर्णय का पालन करे।यदि कोई समन्वय पीठ किसी अन्य पीठ द्वारा प्रतिपादित कानून के सिद्धांतों से सहमत नहीं है, तो मामला केवल एक बड़ी पीठ को भेजा जा सकता है।(प्रदीप चंद्र परिजा बनाम प्रमोद चंद्र पटनायक, (2002) 1 एस. सी. सी. 1 के बाद भारत संघ बनाम हंसोली देवी, (2002) 7 एस. सी. सी. 273 देखें।लेकिन कोई भी निर्णय समन्वय पीठ द्वारा निर्धारित कानून के विपरीत या असंगत नहीं हो सकता है।कल्याणी स्टोर (ऊपर) और के. के. नरूला (ऊपर) दोनों को संविधान पीठों द्वारा प्रस्तुत किया गया है।इसलिए, उक्त निर्णयों को किसी भी उद्देश्य के लिए खारिज नहीं किया जा सकता है; विशेष रूप से तब जब दोनों को सामूहिक रूप से लागू करने पर बहुमत द्वारा प्रस्तावित एक विपरीत निर्णय की ओर ले जाता है।”

डी.

ई.

एफ.

32. विद्वान एकल न्यायाधीश ने न्यायिक अनुशासन का पालन नहीं विद्वान , जबकि एक अन्य विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा सेट्टू बनाम राज्य (उपरोक्त) में लिए गए दृष्टिकोण के विपरीत और तिरछे दृष्टिकोण का पालन विद्वान ।विवादित निर्णय में विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा लिया गया विपरीत दृष्टिकोण न केवल गलत है, बल्कि राज्य और अभियोजन पक्ष को गलत संकेत भी देता है जो उन्हें किसी व्यक्ति की स्वतंत्रता का उल्लंघन करने के लिए प्रोत्साहित करता है।

जी.

33. हम आगे ध्यान दे सकते हैं कि विवादित फैसले में विद्वान एकल न्यायाधीश ने न केवल न्यायिक अनुशासन का उल्लंघन विद्वान था, बल्कि

एच.

सेट्टू बनाम द स्टेट में विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा की गई एक टिप्पणी को भी अनुचित बताया गया है।उच्च न्यायालयों और उच्चतम न्यायालय सहित सभी न्यायालयों को न्यायालयों की समिति के सिद्धांत का पालन करना होता है।पीठ चाहे समन्वय हो या बड़ी, उसे किसी निर्णय पर कोई अनुचित टिप्पणी करने से बचना चाहिए, भले ही वह कम कोरम वाली पीठ द्वारा दी गई हो।एक बड़ी कोरम में बैठने वाली पीठ कानून के सवाल पर एक फैसले को पलटने में सही हो

सकती है, जो एक समन्वय पीठ में बैठने वाले न्यायाधीश के अधिकार क्षेत्र में नहीं है।किसी भी मामले में, एक समन्वय पीठ या एक बड़ी पीठ में बैठने वाले न्यायाधीश को किसी अन्य निर्णय पर कोई प्रतिकूल टिप्पणी या अनुचित टिप्पणी करने का कोई अधिकार नहीं है।हम विवादित निर्णय में विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा अपनाए गए पाठ्यक्रम को दृढ़ता से अस्वीकार करते हैं।

बी.

सी.

34. पूर्वगामी चर्चाओं को ध्यान में रखते हुए, हम इस अपील की अनुमति देते हैं, विद्वान एकल न्यायाधीश के फैसले को अपास्त करनाते हुए, निर्देश देते हैं कि अपीलार्थी को निचली विचारण न्यायालय की संतुष्टि के लिए दो प्रतिभूतियों के साथ 1,000/- के व्यक्तिगत मुचलके के अधीन डिफ़ॉल्ट जमानत पर रिहा विद्वान जाए।

डी.

अंकित ज्ञान

अपील की अनुमति दी गई।

ई.

एफ.

जी.

एच.